स्मार्ट सिटीः भारत का शहरी भविष्य
Smart Cities: India's Urban Future

शाहाना चट्टराज
Shahana Chattaraj
August 24, 2015

गत जून में भारत सरकार ने एक बेहद महत्वाकांक्षी और भविष्योमुखी कार्यक्रम की शुरुआत की थी. यह कार्यक्रम प्रधानमंत्री मोदी के विकास एजेंडा का केंद्रीय मुद्दा है. स्मार्ट सिटी मिशन के अंतर्गत नये अधुनातन शहरों के निर्माण और पुराने शहरों के आधुनिकीकरण का काम शामिल होगा. इस मिशन को लेकर पत्र-पत्रिकाओं में खूब लिखा गया है और इससे लोगों ने भारी उम्मीदें भी लगा रखी हैं. भारत का तेज़ी से अंधाधुंध शहरीकरण हो रहा है और उम्मीद है कि अगले तीन दशकों में चार सौ मिलियन निवासी शहरी आबादी में शामिल हो जाएँगे.

गत जून में भारत के सर्वाधिक अग्रणी वास्तुविद और शहरीकरण के विशेषज्ञ चार्ल्स कोरिया का देहांत हो गया. उन्होंने "*The New Landscape: Urbanisation in the Third World*" नामक अपनी पुस्तक में वास्तुकला के भारतीय विद्यार्थियों की कई पीढ़ियों के सामने एक बिल्कुल नई सोच रखी है. उन्होंने वास्तुकला से संबंधित ली कोर्बुसियर के काल्पनिक दृष्टिकोण और सामुदायिक "स्वतः स्फूर्त" आंदोलन दोनों को ही लेकर अपना असंतोष प्रकट किया है. यह असंतोष उन्होंने अपने प्रत्युत्तर में दिया है. जेन जेकब्स की तरह उन्होंने भी शहरों और उनके आस-पड़ोस के इलाकों के स्थानिक रूप और आर्थिक व सामाजिक जीवन के परस्पर संबंधों पर ध्यान केंद्रित किया है. जेकब्स की विचारधारा के विपरीत कोरिया हस्तक्षेपवादी थे. अपने विश्लेषण से उन्होंने गरीब देशों में शहरीकरण की चुनौतियों का सामने करने और उनसे उत्पन्न अवसरों पर ध्यान दिया है. जहाँ एक ओर जेकब का केंद्रबिंदु न्यूयॉर्क था, वहीं कोरिया का केंद्रबिंदु बंबई (अब मुंबई) रहा है. कोरिया के अनुसार "बंबई एक महान् नगर है और साथ ही भयावह भी." भले ही इसके भौतिक पर्यावरण का ह्रास हो रहा है, लेकिन इसमें अवसरों, परस्पर संवाद और आर्थिक गतिविधियों, सूक्ष्म कौशलों, आकांक्षाओं और उद्यमिता की भरमार है. उन्होंने बंबई से बेहतर, कहीं अधिक खुशनुमा और साफ़-सुथरी और व्यवस्थित इमारतों वाले और चौड़ी सड़कों वाले नियोजित शहरों से बंबई की तुलना करते हुए कहा था कि तमाम सुविधाओं के बावजूद भी वे बंबई की तरह समृद्धि के शिखर पर नहीं पहुँच पाए.

क्रॉफ़र्ड मार्केट और मोहम्मद अली रोड के चारों ओर बसे मुंबई के ऐतिहासिक बाज़ारों में व्यापार की चहल-पहल ही वास्तव में कोरिया की मूलभूत सोच का केंद्र-बिंदु है. शोर-शराबे से गूँजते, भीड़-भाड़ भरे और बिल्कुल अस्त-व्यस्त होने पर भी यह मुंबई की व्यावसायिक प्रतिभा, सामाजिक विविधता, आप्रवासियों को अपने भीतर समोकर उन्हें आर्थिक सक्रियता प्रदान करने का एक जीता-जागता उदाहरण है. सरकार समझती है कि इस जर्जर, जीर्ण-शीर्ण, गिरे-पड़े और पुराने व्यावसायिक इलाके को चमकते टावरों और व्यावसायिक कॉम्पलेक्स में बदलकर ही पुनर्विकास के मार्ग पर आगे बढ़ा जा सकता है, लेकिन उन्हें "स्मार्ट" शब्द के निहितार्थ को समझना होगा, इसका अर्थ है, अपनी कुशलता से एक ऐसा वातावरण निर्मित करना, जिसमें परिस्थितियों के अनुरूप बदलने की क्षमता हो और वहाँ के निवासियों के आर्थिक और सामाजिक जीवन के अनुरूप ढालने की क्षमता हो. उनका शहरी ताना-बाना विविध प्रकार की गतिविधियों और अधिकाधिक काम-धंधों और विविधिता

को बल प्रदान करता है. विभिन्न समुदायों में और उनसे संबद्ध जालतंत्र में कई प्रकार के कारोबार गुँथे हुए हैं और साम्प्रदायिकता और आस-पड़ोस की सीमाओं को तोड़कर ये कारोबार किये जाते हैं. औपचारिक और अनौपचारिक आर्थिक गतिविधियों में काम-धंधा, समुदाय और घरेलू जीवन सब-कुछ घुल-मिला होता है. ''बीच के अंतरालों'' का उपयोग पारगमन, व्यापार और समाजीकरण के लिए गहन रूप में और अपने-आपको ढालते हुए किया जाता है. साझा इतिहास, सघनता और निकटता के कारण एक दूसरे पर विश्वास बढ़ता है और मिल-जुलकर काम करने का कौशल विकसित होता है, सूचनाएँ, साख और नये अवसर मिलते हैं.

मुंबई की अनौपचारिक अर्थ-व्यवस्था के कई हिस्से न केवल गतिशील और उद्यमिता-प्रधान हैं, बल्कि एक ऐसे सामाजिक सुरक्षा जाल के प्रतिरूप हैं, जिनमें राज्य कल्याण प्रणाली बहुत लचर और कमज़ोर है. मुंबई और कई अनेक बड़े शहरों के बहुत-से फेरीवाले पहले मिल मज़दूर थे. औपचारिक विनिर्माण कार्यों में रोज़गार का दायरा अब सिमटता जा रहा है. एक अकुशल आप्रवासी मज़दूर भी सड़क पर ठेला लगाकर खाने-पीने की चीज़ें बेचकर या छतरी की मरम्मत करके अपनी रोजी-रोटी कमा ही लेता है. कोरिया मानते हैं कि जगह का यह टुकड़ा शहर के एक गरीब निवासी के लिए एक महत्वपूर्ण आर्थिक संसाधन है. कोरिया इस बात पर बल देते हैं कि विभिन्न प्रकार के लघु उद्योग और सेवा प्रदाता एक खास तरह का देसी परिवेश बना लेते हैं और फिर उसका रख-रखाव करते हैं, जबकि गगनचुम्बी इमारतों और ऐक्सप्रेस-वे से अटे-पड़े शहर या स्मार्ट सिटी में उन्नत टैक्नोलॉजी और भारी पूँजी के बिना गुजारा नहीं हो सकता. भारत में निम्न-कौशल वाले कारीगर भारी मात्रा में हैं, जिनके लिए औपचारिक उद्योगों या आधुनिक सेवाओं में कोई जगह नहीं है. नगर निर्माण के लिए स्मार्ट रणनीति का उपयोग रोज़गार के अवसर पैदा करने, लघु निर्माण के काम को और रियल इस्टेट के क्षेत्र को अपग्रेड करने के लिए किया जा सकता है, क्योंकि आज कृषि के बाद भारत में रोज़गार का यही सबसे बड़ा स्रोत है.

मुंबई के ऐतिहासिक बाज़ार हमारे सामने एक तरह का खास उदाहरण प्रस्तुत करते हैं, लेकिन मिले-जुले उपयोग वाले, घनी आबादी के बीच बने परिसर भारत में बहुत प्रचलित हैं. राजमार्गों के किनारे, भीड़-भाड़ से दूर, ऊँचे आसमान तक छाये शहरों के बाहरी इलाकों में बने ये परिसर भारत के ''आधुनिक'' शहरी विकास के प्रतीक हैं, लेकिन ये व्यापक रिबन के विकास के ठीक विपरीत हैं. कोरिया के अनुसार देसी ढंग के पर्यावरण में बने इन परिसरों में आर्थिक विकास और रोज़गार की स्थिति बहुत अच्छी रहती है और इसके विकास के लिए कम से कम संसाधनों की ज़रूरत होती है. इनमें लोच होती है और इन्हें परिस्थितियों के अनुकूल भी ढाला जा सकता है. ये गुण अर्थव्यवस्था और संक्रमण की स्थिति से गुजरते समाज के लिए और जलवायु-परिवर्तन के भारी खतरे से जूझते हुए हमारे पृथ्वी-ग्रह के लिए भी बहुत आदर्श हैं, लेकिन इन परिसरों में बहुत-सी कमियाँ हैं. यहाँ न तो म्युनिसिपल सेवाएँ अच्छी हैं, न ही पर्याप्त बुनियादी ढाँचा है. हरियाली और सार्वजनिक सुविधाओं की भी बहुत कमी है. यहाँ के जीवन स्तर को ऊँचा उठाने के लिए स्थानीय प्रशासन को मज़बूत करने की और उत्तरदायी व कल्पनाशील योजना की आवश्यकता होगी. वैश्विक टैक्नोलॉजी के प्रदाताओं और उत्साही रियल इस्टेट निगमों द्वारा विलास पूर्ण मॉडल प्रस्तुत करने के बजाय वे एक ऐसे वैकल्पिक साँचे की पेशकश करते हैं जिसमें भारत की परिस्थितियों के अनुरूप और उपयुक्त स्मार्ट सिटी की अवधारणा स्पष्ट की गई है.

वैश्विक कंपनियाँ स्मार्ट सिटी के ब्लूप्रिंट बेचने के लिए लाइन लगाकर खड़े हैं और मीडिया की रिपोर्टों में आगे बढ़-चढ़कर उनकी विशेषताओं का बखान किया जाता हैः यहाँ रियल टाइम डैटा से सुसज्जित केंद्रीय नियंत्रण कक्ष बने हैं और पार्किंग स्थलों व इलैक्ट्रॉनिक पॉड्स का पता लगाने के लिए डिजिटल सैंसर लगे हैं. इस तरह के लेखा-जोखा और ताम-झाम को देखकर तो लगता है कि ये लोग यह भूल गए है कि शहर वास्तव में लोगों के रहने के ठिकाने होते हैं. इमारतें और बुनियादी ढाँचे कितने भी महत्वपूर्ण क्यों न हों, मनुष्य की तुलना में उनका स्थान गौण ही रहेगा. और इनसे महत्वपूर्ण सवालों के जवाब भी नहीं मिल पाते. इन स्मार्ट शहरों में कौन रहेगा और कौन यहाँ काम करेगा? क्या गरीब आप्रवासी मज़दूर यहाँ रहते हुए कोई काम-धंधा कर सकेंगे या उनकी घुसपैठ का पता लगाने के लिए डिजिटल सैंसर का उपयोग किया जाएगा ? किन सिद्धांतों के आधार पर उन्हें शासित किया जाएगा- स्थानीय चुनावी लोकतंत्र द्वारा या निजी प्रबंधन से चलने वाले निगमों द्वारा ?

भारत में स्मार्ट शहरों का यह काल्पनिक चित्र इतना अजूबा है कि यह भारत की परिस्थितियों से कतई मेल नहीं खाता. हरे-भरे मँहगे परिसरों के बीच बसे ऐक्सप्रैसवे से युक्त इस काल्पनिक शहर में सब कुछ तो है, लेकिन इंसान कहीं नज़र नहीं आते. यहाँ कॉरबूज़ियर के आधुनिकतावादी शहर के ''पार्क-इन-टावरों'' में उनकी गूँज तो सुनाई देती है, लेकिन उनकी वह उक्ति सुनाई नहीं देती जिसमें आगे की कार्य-श्रृंखला बनाई गई है. यह सोचना भी मुश्किल लगता है कि वे इन स्मार्ट शहरों में भारी मात्रा में अनौपचारिक लघु, मध्यम और माइक्रो-उद्यमों को कैसे बसाएँगे, जो शहरी अर्थ-व्यवस्था का मेरुदंड हैं. प्रदूषण और जलवायु-परिवर्तन की बढ़ती चिंता के बीच आठ लेन के राजमार्गों का जाल बिछाने का विचार शहरी प्रगति का गलत प्रतीक है; भारत की पाँच प्रतिशत से भी कम आबादी के पास अपनी कारें हैं और बहुत-से गरीब लोग तो सार्वजनिक परिवहन का भी खर्च नहीं उठा पाते. स्मार्ट सिटी की दक्षता तो ठीक है, लेकिन यह सोचकर हैरानी होती है कि कुछ नये प्रस्तावित स्मार्ट शहरों में दुर्लभ ज़मीन और सार्वजनिक संसाधनों की खपत में अपव्यय भी होगा. साथ ही इनका आर्थिक औचित्य भी खोखला ही मालूम पड़ता है. भारतीय शहरों की मूलभूत समस्याएँ बुनियादी हैं. ये समस्याएँ हैं, बुनियादी ढाँचों और सेवाओं की. इन्हें व्यवस्थित करने के लिए नगर प्रशासन को ही प्रभावी और उत्तरदायी बनाना होगा. यह तो पहले से ही सोचा जा सकता है कि मानसूनी बारिश आने पर बड़े शहरों की सड़कों पर लबालब पानी भर जाएगा और यातायात-व्यवस्था ठप्प हो जाएगी. इसकी आशंका देखते हुए रिपोर्टर यह बताते ही रहते हैं कि जल-निकासी और मल-निकासी की व्यवस्था को कारगर बनाये रखने के लिए उन्नत प्रौद्योगिकी की आवश्यकता नहीं है; हज़ारों साल पहले ही मोहनजोदड़ो और हड़प्पा की प्राचीन सभ्यताओं ने इस व्यवस्था को सुदृढ़ कर लिया था.

भारत के स्मार्ट सिटी मिशन का जो प्रचार किया जा रहा है, वह ज़मीनी सचाई से कोसों दूर है. कुछ आलोचकों ने तो इसे सरकार का शहरी एजेंडा बताया है और इसे संभ्रांत लोगों का शगूफा बताते हुए असंगत ही माना है, लेकिन भारत की शहरी नीति अभी विकसित हो रही है. वह अभी पूरी तरह से स्थिर नहीं हुई है. शहरी मिशन की शुरुआत करते हुए प्रधान मंत्री मोदी ने स्मार्ट सिटी के विकास के मॉडल को ''बॉटम-अप'' बनाने का आह्वान किया है. ऐसे मॉडल में ही आम नागरिकों के रोज़मर्रे के जीवन का, मानव व्यवहार का और निर्मित परिवेश के साथ उसके संबंधों का ख्याल रखा जा सकता है. अगर भारत के स्मार्ट शहरों को तेज़ी से विकसित करना है तो हमें इन्हें कार-केंद्रित होने से और पिछली शताब्दी की मध्यवर्ती शहरी अर्थ-व्यवस्था से बचाना होगा. तभी विकास की गति और शहरी प्रणाली की लोचदार व्यवस्था को सुनिश्चित किया जा

सकेगा. अगर हम कहते हैं कि भारत के नीति-निर्माता जैसे-जैसे आगे बढ़ रहे हैं, वैसे-वैसे ही उनकी गति तेज़ होती जा रही है, तो इसे आलोचना नहीं समझना चाहिए, बल्कि यह मान लेना चाहिए कि वे एक ऐसे अनजाने रास्ते पर चल रहे हैं जिसमें होशियारी से योजना बनाने और शहरों को इक्कीसवीं सदी के अनुरूप ढालने के लिए सच्चे अर्थों में नवोन्मेष के लिए गुंजाइश रहेगी. जैसे-जैसे भारत शहरी भविष्य को आकार देने के लिए अपने मिशन को आगे बढ़ाएगा तो कोरिया की अंतर्दृष्टि और भी अधिक प्रासंगिक होती जाएगी. भारतीय शहरों को ''विश्व-स्तर'' का दिखाने के प्रयास में नीति-निर्माताओं को चाहिए कि वे उन्हें सफल शहर बनाने की अनदेखी न करें: कोई भी शहर सफल तभी होगा जब उसमें समो लेने की क्षमता होगी, कुशलता होगी, परिस्थितियों के अनुरूप अपने-आपको ढालने की क्षमता होगी. साथ ही उनमें गाँवों के गरीब आप्रवासियों के साथ-साथ शिक्षित व्यावसायिकों को बेहतर जीवन प्रदान करने के अवसर उपलब्ध कराने की गुंजाइश भी होगी.

शाहाना चट्टराज ऑक्सफ़ोर्ड विश्वविद्यालय,ब्लावत्निक शासकीय स्कूल में पोस्ट डॉक्टरल फ़ैलो हैं.

हिंदी अनुवादः विजय कुमार मल्होत्रा, पूर्व निदेशक (राजभाषा), रेल मंत्रालय, भारत सरकार <malhotravk@gmail.com> / मोबाइल : 91+9910029919.